# पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
# श्री समयसार, गाथा १८१-१८३, ता. १३-४-१९८९
# शिकोहाबाद, प्रवचन नंबर P१९

समयसार का संवर नाम का अधिकार, यानि धर्म का अधिकार है। यानि धर्म की उत्पत्ति कैसे हो, ये अधिकार है। अनंत-अनंतकाल से आत्मा अज्ञानमय भाव से (स्वयं को) रागादि का कर्ता मानता है। अभी रागादि के साथ कर्ता-कर्म सम्बन्ध छूटने के बाद, आत्मा ज्ञान का कर्ता होता है। आत्मज्ञान का कर्ता, शास्त्रज्ञान (का) नहीं। ऐसे भेदज्ञान से संवर की प्राप्ति होती है। यानि भेदज्ञान से शुद्धात्मा की अनुभूति होती है, शुद्धात्मा का अनुभव उसका नाम ही संवर है, उसका नाम ही धर्म है, उसका नाम ही मोक्ष का मार्ग है, उसका नाम ही सुख का मार्ग है।

तो उसका मथाला (शीर्षक) है। यहाँ **संवर अधिकारके प्रारम्भमें ही, भगवान श्री कुंदकुंदाचार्य सकल कर्मका संवर करनेका उत्कृष्ट उपाय जो भेदविज्ञान है उसकी प्रशंसा करते हैं।** शुद्धात्मा के सन्मुख होकर अनुभव करने पर भावकर्म, द्रव्यकर्म और नोकर्म, वो अटक जाते हैं। अटक जाते हैं (अर्थात्) भावकर्म की उत्पत्ति नहीं होती है, नया कर्म बंधता नहीं है और पुराने कर्म की निर्जरा चालू हो जाती है। एक कार्य में कितना कार्य होता है। भेदज्ञान का अर्थ क्या है कि मेरा शुद्धात्मा जो है, वो वर्तमान पुण्य-पाप के परिणाम से भिन्न है, रागादि से भिन्न है। ऐसा राग का लक्ष्य छोड़कर शुद्धात्मा का अनुभव होता है, तो जो स्वानुभवदशा प्रगट हुई, नई, वो स्वानुभवदशा प्रगट हुई, नई, तो मिथ्यात्व नाम का भावाश्रव रुक गया, यानि उत्पन्न हुआ नहीं। और पुराने (जूने) कर्म की निर्जरा होती है और नया कर्म बंधना रुक गया। भावाश्रव रुक गया, भावकर्म, तो उसके निमित्त से नया कर्म बंधता था, वो रुक गया। और नया कर्म बंधना रुक गया तो देह आदि मिलना भी रुक गया, छूट गया। मिलेगा ही नहीं, शरीर मिलेगा (ही) नहीं। और इधर, इधर (अंदर) से, वो (तो) बाहर से बात की। इधर क्या हुआ? कि शुद्धात्मा के अनुभव से उसको पुराने कर्म की निर्जरा हो जाती है और नया कर्म बंधता नहीं है। कार्य एक है, उसके कारण दो होते हैं - नए कर्म का बंध रुक गया और पुराने कर्म की निर्जरा हो रही है। परिणाम एक, अनुभूति का परिणाम एक है, शुद्धात्मा की अनुभूति हुई, अपना शुद्धात्मा का ज्ञान, शुद्धात्मा का श्रद्धान, शुद्धात्मा का आचरण, ऐसे जो निर्विकारी, वीतरागी परिणाम प्रगट हुआ, उसने दो काम किया। (वास्तव में) उसने (वीतरागी परिणाम ने) नहीं किया। उसने (परिणाम ने), वो (वीतरागी परिणाम जैसे ही) हुआ, तो ऐसे (दोनों काम) हो गए। ये हुआ, तो ऐसा हो गया।

जब सम्यग्दर्शन हुआ तो मिथ्यात्व की उत्पत्ति हुई नहीं और मिथ्यात्व का, भावकर्म के संबंध से द्रव्यकर्म (का) बंधन रुक गया। नया कर्म बंधना रुक गया। कर्म नहीं है, तो शरीर भी मिलेगा नहीं। तीन बात का ये संवर हो गया, यानि रुक गया। और इधर जूने (पुराने) कर्म की क्या स्थिति हुई कि कर्म की निर्जरा हो गई। आहाहा! कर्म की निर्जरा और अशुद्धि की हानि और शुद्धि की प्राप्ति और बाद में शुद्धि की वृद्धि। ऐसी प्रक्रिया सहज, शुद्धात्मा के अनुभव से होती है। आहाहा!

ऐसा **सकल कर्मका संवर**, ऐसा लिखा है ना? सकल यानि सर्व प्रकार का भावकर्म, द्रव्यकर्म और नोकर्म का संवर यानि रुक जाना। संवर यानि रुक जाना। जैसे ये जहाज में छिद्र पड़ा ना, छिद्र, तो पानी आता है, अंदर (जहाज) में भरता है। तो छिद्र बंद होता है, (तब) पानी आना रुक गया। ऐसे, अपने शुद्धात्मा को भूलकर देहादि, रागादि मेरा है, ऐसी मिथ्या मान्यता करते थे, तो भावकर्म मिथ्यात्व उत्पन्न होता था, उस भावकर्म के निमित्त से ज्ञानवरणादि आठ प्रकार के कर्म का बंध होता है, संयोगरूप, और कर्म के संबंध से देहादि की परंपरा चलती है, नोकर्म। वो सब रुक गया, सारा संसार, खेल ख़तम हो गया। एक शुद्धात्मा के अनुभव से सारा संसार मिट गया। आहाहा! ऐसी अलौकिक (क्रिया) है। एक ही क्रिया है, शुद्धात्मा का अनुभव, ये धर्म की क्रिया है। कषाय की मंदता, वो धर्म की क्रिया नहीं है, अधर्म की क्रिया है। आहाहा! इससे वर्तमान आत्मा दुःखी होता है और इससे नया कर्म बंध होता है, इससे शरीर आदि की प्राप्ति होती है। सारा संसार (खड़ा हो जाता है)। आहाहा!

मुमुक्षु:- संयोग में भी नहीं रहा? भावकर्म, द्रव्यकर्म संयोग में भी नहीं रहा?

उत्तर:- हाँ! संयोग में कहाँ रहा? जब भावकर्म की उत्पत्ति रुक गयी, तो उसका जो निमित्त बनता था, कर्म का, उस निमित्त का अभाव (हुआ), तो नैमित्तिक का (भी) अभाव (हुआ)। निमित्त है भावकर्म, नैमित्तिक है द्रव्यकर्म, नया। निमित्त के अभाव से नैमित्तिक भाव का (भी) अभाव और नैमित्तिक भाव के अभाव से नोकर्म का अभाव हो जाता है। ऐसी परंपरा चालू हो जाती है। एक शुद्धात्मा का अनुभव आत्मा ने अनंतकाल से नहीं किया, बाकी सब कुछ किया। आहाहा! मुनिदीक्षा भी अनंतबार लिया और ग्रैवेयक तक भी, स्वर्ग के (ग्रैवेयक तक) जाकर के दुःख भी भोग लिया। आहाहा! मगर आत्मिक सुख (तो) एक समय भी नहीं आया।

ये संवर का उत्कृष्ट उपाय भेदविज्ञान है। भेदविज्ञान का दो प्रकार है, सविकल्प और निर्विकल्प। सविकल्प भेदज्ञान का (नाम)...(जो सविकल्प) भेदज्ञान होता है, उसका नाम है, व्यवहार। और निर्विकल्प भेदज्ञान का नाम है, निश्चय। आहाहा! शुभभाव करना वो व्यवहार नहीं है। शुभभाव करने का नाम व्यवहार नहीं है। वो तो अज्ञान है, भैया! आहाहा! होता है, उसको जानना, वो भी व्यवहार है। सचमुच तो आत्मा को जानना, वो निश्चय है। आहाहा! सकल कर्म का, संवर का उत्कृष्ट उपाय भेदविज्ञान यानि आत्मा का अनुभव (है)। भेदज्ञान (करके आत्मा) का अनुभव (करना), भेदज्ञान करके आत्मा का (अनुभव करना)। राग से भिन्न करके आत्मा को (अनुभवना), अकेला ज्ञान का वेदन (करना)। राग मिश्रित ज्ञान का वेदन अज्ञान है। राग मिश्रित ज्ञान का वेदन अज्ञान है। जैसे दूध में ज़हर डालकर पीना, आहाहा! तो मरण होता है। ऐसे राग (के) मिश्रित होकर ज्ञान का स्वाद लेना, वो अज्ञान है। राग से जुदा करके अकेला ज्ञान का स्वाद लेना, उससे आनंद आता है। आहाहा! आनंदानुभूति। रागानुभूति अनंतानंत काल से किया। रागानुभूति अनंत-अनंत काल से किया जीव ने, अज्ञानभाव में। मगर ज्ञानानुभूति, आनंदानुभूति एक समय भी किया नहीं है। आहाहा! ये ज्ञानानुभुती, आनंदानुभूति, उसका नाम संवर यानि धर्म की शुरुआत होती है। आहाहा!

इसका उपाय क्या है? वो उपाय बताते है। जो उपाय जानते नहीं है, उनको बताते हैं और जिसने उपाय जान लिया, वो बताते हैं। जिसने उपाय जान लिया, वो बताते हैं और जिसको उपाय

जानने में नहीं आया, उसको बताते है। आहाहा! ऐसा है। ऐसी परम्परा इस भारत में चालू है, चलती है, अनादिकाल से। तीर्थंकर होते हैं और बाद में भी ज्ञानी होते हैं। कहते जाते हैं और चलते जाते हैं। कहते जाते हैं और मोक्ष में चले जाते हैं और यहाँ रुकते नहीं। आहाहा! गाथा १८१, १८२, १८३ –

**उपयोग में उपयोग, को उपयोग नहिं क्रोधादिमें ।**
**है क्रोध क्रोधविषै हि निश्चय, क्रोध नहिं उपयोगमें ।।१८१।।**
**उपयोग है नहिं अष्टविध, कर्मों अवरू नोकर्ममें ।**
**ये कर्म अरु नोकर्म भी कुछ हैं नहीं उपयोगमें ।।१८२।।**
**ऐसा अविपरीत ज्ञान जब ही प्रगटता है जीवके ।**
**तब अन्य नहिं कुछ भाव वह उपयोगशुद्धात्मा करे ।।१८३।।**

उसकी **टीका:- वास्तवमें एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं है**, महासिद्धांत। एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। जैसे ये दायें हाथ का बायाँ हाथ नहीं है और बायें हाथ का (दायाँ हाथ नहीं)। दो वस्तु अलग-अलग हैं। ऐसे ये दो अँगुली हैं, तो एक अँगुली में दूसरी अँगुली का अभाव है। एक में दूसरे की नास्ति, तो एक की अस्ति सिद्ध होती है। एक में दूसरे का अभाव (है)। इस अँगुली में, इसमें इसका (अँगुली का) अभाव (है)। उसमें इसका अभाव (है), तो सिद्धि क्या हुई? दो की सिद्धि हुई कि एक की? एक की हो गई। समझे? स्वरुप से सत्ता और पररूप से असत्ता। दो भाव के द्वारा एक पदार्थ की सिद्धि होती है। इसका **वास्तवमें एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं, नहीं है,** एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। आहाहा!

**(अर्थात् एक वस्तु दूसरी वस्तुके साथ कोई भी संबंध नहीं रखती)** कारण कि एक वस्तु, दूसरी वस्तु नहीं है। जैसे एक ये पेज है, एक पेज, ये पेज इस पेज का नहीं है, क्योंकि इस पेज में इस (दूसरे) पेज का अभाव है। तो एक के अन्दर दूसरे का अभाव, इसके द्वारा एक की सिद्धि होती है। इसका अस्तित्व सिद्ध करने में भी....उसमें इसकी नास्ति, ऐसी अस्ति है तो निशंक हो जाता है। निशंक हो जाता है। समझे? ऐसा **क्योंकि, क्योंकि दोनोंके प्रदेश भिन्न हैं। प्रदेश क्षेत्र भिन्न हैं। इसका क्षेत्र भिन्न है और इसका क्षेत्र भिन्न है। और इसका क्षेत्र (पेज का) और (दूसरे पेज का) क्षेत्र भिन्न है। एक क्षेत्र नहीं है। एक क्षेत्र यानि एक जगह पर दो पन्ने नहीं है। अपनी जगह पर ये पन्ना है और अपनी जगह पर ये पन्ना है। जगह अलग-अलग है। इंजीनियर साहब! वो जगह, रहने का स्थान, अलग-अलग है। ये पत्ता इसमें रहता है और ये पत्ता इसमें रहता है। तो स्थान ही अलग-अलग है, क्षेत्र अलग-अलग है, दोनों का।**

ऐसा यह भगवान आत्मा ज्ञानमयी आत्मा और रागादि, दोनों का क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। एक साथ रहने पर भी, आकाश के एक प्रदेश में रहने पर भी, ओहोहो! दो भाव अलग-अलग हैं। आत्मा में दुःख नहीं है और दुःख में आत्मा नहीं है। आहाहा! आत्मा में दुःख है और दुःख में आत्मा है, ऐसा वस्तु का स्वभाव नहीं है। आहाहा! लोटा में जल है और जल में लोटा है, ऐसा है नहीं। जल-जल में है, लोटा-लोटा में है। शक्कर-शक्कर में है और उसका मैल-मैल में है। मैल में शक्कर नहीं और शक्कर में मैल नहीं। आहाहा! कपड़ा-कपड़ा में है, कपड़ा मैल में नहीं और मैल कपड़े में नहीं है।

ऐसे, एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। क्षेत्र-भेद है, प्रदेश-भेद है। अपने-अपने क्षेत्र में रहते हैं सब। आहाहा! **दोनोंके प्रदेश भिन्न होने से,** इतनी जुदाई (है)। आहाहा! प्रदेश-भेद करने से बराबर जुदाई ख्याल में आती है। जो प्रदेश-भेद नहीं लिखा हो तो, भाव-भेद से तो भेद है, मगर प्रदेश एक है ऐसी भ्रान्ति हो जाती है। ख्याल में आया? भाव-भेद से भेद है। भले, चेतन और राग अलग (हैं), भाव-भेद से भेद है। मगर क्षेत्र तो एक है ना, एक सत्ता है ना? तो कहें नहीं, दो सत्ता न्यारी-न्यारी हैं। आहाहा! इसलिए प्रदेश-भेद करने से अत्यंत जुदाई भासित होती है। ऐसा जुदापने का ही अनुभव होता है। लिखा है डॉक्टर! प्रदेश-भेद, क्षेत्र-भेद (है)। आहाहा! इसका (पन्ने का) क्षेत्र और उसका (पन्ने का) क्षेत्र अलग है और इसका (हाथ का) क्षेत्र, उसका (पन्ने का) क्षेत्र अलग है। हाथ का क्षेत्र और ये (पन्ना का क्षेत्र) अलग-अलग है।

मुमुक्षुः- अत्यंताभाव।

उत्तरः- ऐसे इसका क्षेत्र, ये जितने क्षेत्र में अँगुली है, उस क्षेत्र में एक ही अँगुली है। इसका क्षेत्र ये है और इसका क्षेत्र (ये)। (एक अँगुली के) दो (क्षेत्र) नहीं हैं। हाँ! दो भिन्न-भिन्न हैं। आहाहा! ऐसे एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं क्योंकि प्रदेश-भेद है। भाव-भेद से भेद नहीं, लक्षण-भेद से भेद नहीं। लक्षण-भेद से भेद है, भाव-भेद से भेद तो है, मगर प्रदेश-भेद से भेद होने से अत्यंत भिन्नता (ख्याल आती) है। आहाहा! मूल चीज़ है, जब क्षेत्र-भेद किया ना, यथार्थ किया। आहाहा! क्षेत्र-भेद से जुदाई होती है। भाव-भेद और लक्षण-भेद, वो तो वो लक्षण-भेद से भेद है, वस्तु तो एक होती है।

मुमुक्षुः- ऐसी भ्रान्ति रह जाती है।

उत्तरः- भ्रान्ति रहती है। जैसे ज्ञान और आत्मा नाम-भेद से भेद, लक्षण-भेद से भेद, वस्तु तो (एक ही है)। ज्ञान और आत्मा एक है। उसका प्रदेश-भेद नहीं है, उसका प्रदेश (भेद नहीं है)। जितने क्षेत्र में ज्ञान है, उतने क्षेत्र में वो आत्मा भी है। जितने क्षेत्र में उपयोग है, उतने क्षेत्र में आत्मा है। उसमें प्रदेश-भेद नहीं है। मगर राग और आत्मा का प्रदेश-भेद है। आहाहा!

मुमुक्षुः- क्षेत्र-भेद है इसलिए लक्षण-भेद है?

उत्तरः- क्षेत्र-भेद है, इसलिए दो पदार्थ सिद्ध हो गए। और दो पदार्थ सिद्ध हो गए, इसलिए लक्षण-भेद से भेद, नाम-भेद से भेद, वस्तु-भेद से भेद, प्रदेश-भेद से भेद, सर्वथा जुदाई। सर्वथा जुदा। आहाहा! ऐसी चीज़ है।

मुमुक्षुः- अगर लक्षण-भेद से ही भेद होता, राग में और आत्मा में, तो फिर ज्ञान में और राग में क्या अंतर रहा?

उत्तरः- हाँ! ये राग है, आत्मा का लक्षण ही नहीं है क्योंकि अभेद में (ही) लक्ष्य-लक्षण के भेद का प्रकार होता है। वो राग तो भिन्न है। राग भिन्न है, तो राग आत्मा का लक्षण होता नहीं हैं। आहाहा! ज्ञान तो लक्षण है, मगर राग आत्मा का लक्षण नहीं है।

मुमुक्षुः- नई बात आई।

उत्तरः- ज्ञान और आत्मा तो एक वस्तु है। तो लक्षण और लक्ष्य, एक पदार्थ होता है। एक पदार्थ में लक्षण और लक्ष्य होता है। शक्कर और मिठास, शक्कर और मिठास एक पदार्थ है। तो लक्षण-लक्ष्य

का भेद (भले) करे, बाकी वस्तु तो एक है। ऐसे ज्ञान और आत्मा तो एक ही है। लक्षण-भेद से भेद करने से प्रदेश-भेद नहीं होता है। मगर राग का लक्षण भी भिन्न और प्रदेश भी भिन्न है, इसलिए सर्वथा भिन्न है। अत्यंत भिन्न है, सर्वथा भिन्न है। कथंचित् भिन्न-अभिन्न नहीं है, राग। आहाहा! इसलिए आत्मा राग का करनेवाला नहीं है। इसलिए उपयोग में उपयोग है, उसको जानता है। राग को जानता नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु:- जिसमें जो है, उसी को तो जाना जाता है।

उत्तर:- हाँ! दूसरा कहाँ से जाना जाए? कहाँ से जाना जाए? आहाहा! जो है, उसको जानता है। आहाहा! नहीं हो, उसको (नहीं जानता है)। आहाहा! कर्ता भी नहीं है और ज्ञाता भी नहीं है। राग आत्मा में है ही नहीं, द्रव्य-गुण-पर्याय में नहीं है। द्रव्य में नहीं, गुण में नहीं और पर्याय में भी नहीं है। आहाहा! पर्याय में हो, तो-तो कर्ता-कर्म सम्बन्ध बन जावे। पर्याय में भी नहीं (है) इसलिए कर्ता-कर्म संबंध बनता नहीं है। और पर्याय जब द्रव्य को जानती है, तब द्रव्य में राग नहीं है, गुण में राग नहीं है और पर्याय में (भी) राग नहीं है। ज्ञान की पर्याय में राग नहीं है। आहाहा! राग जुदा और ज्ञान जुदा रहता है। आहाहा! **दोनोंके प्रदेश भिन्न होने से,** भिन्न होने पर नहीं।

मुमुक्षु:- (भिन्न) होने से।

उत्तर:- अनादि-अनंत भिन्न हैं। क्रोध और राग एक प्रदेश, एक क्षेत्र नहीं है। भगवान की पूजा का जो शुभभाव आया और उसको जाननहार जो ज्ञान है, जो ज्ञान में आत्मा जानने में आता है, उस ज्ञान से पूजा का राग भिन्न है। राग अत्यंत भिन्न है। राग जड़ और अचेतन है। पूजा का राग जड़ और अचेतन है। आहाहा! तो उसके साथ कर्ता-कर्म संबंध नहीं है और ज्ञाता-ज्ञेय का संबंध भी नहीं है। आहाहा! ऐसी चीज़ है। जब ज्ञान आत्मा के अभिमुख होता है, तो आत्मा जानने में आता है, राग जानने में (नहीं आता), क्योंकि आत्मा में राग नहीं है। और आत्मा जानने में आवे, साथ में आनंद भी जानने में आता है, मगर राग तो जानने में आता (नहीं है)। आनंद जानने में आवे, दुःख जानने में नहीं आता है क्योंकि दुःख आत्मा में है नहीं। जो जिसमें नहीं है, वो उसे जानने में आता नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु:- भावकर्म के साथ भावेन्द्रियाँ भी ले सकते हैं?

उत्तर:- हाँ! ले सकते (हैं)। भावेन्द्रिय और भावकर्म एक ही जाति है।

मुमुक्षु:- भावेन्द्रयों के प्रदेश भिन्न है?

उत्तर:- हाँ! प्रदेश भिन्न है।

मुमुक्षु:- इंद्रियज्ञान?

उत्तर:- इन्द्रियज्ञान, प्रदेश-भेद है। आहाहा! वो ज्ञेय है, ज्ञान नहीं है। ज्ञान और आत्मा का प्रदेश भिन्न नहीं है, एक प्रदेश है।

मुमुक्षु:- तो भावेन्द्रिय और भावकर्म के प्रदेश एक ही हैं?

उत्तर:- एक ही हैं। ये जुदा प्रदेश हैं, अपने से भिन्न प्रदेश में हैं। भावकर्म और भावेन्द्रिय, अपने प्रदेश से अलग हैं। अपने प्रदेश में क्या है? अपने प्रदेश में अतींद्रिय ज्ञानमयी आत्मा है, गुण भी हैं और उस गुण और गुणी को जाननेवाला उपयोग भी अपने प्रदेश में है। उपयोग का प्रदेश भिन्न नहीं है,

उपयोग का प्रदेश भिन्न नहीं है। मगर भावेन्द्रिय और राग का प्रदेश भिन्न है, सर्वथा भिन्न है।

मुमुक्षुः- भावेन्द्रिय और राग का प्रदेश एक है?

उत्तरः- एक (है)। एक प्रदेश में सब डाल दो, वो पुद्गल का ही प्रदेश है। वो पुद्गल के क्षेत्र में, पुद्गल के क्षेत्र में भावेन्द्रिय भी है, पुद्गल के क्षेत्र में भावकर्म भी है, पुद्गल के क्षेत्र में पाँच महाव्रत, वहाँ रहता है। पाँच महाव्रत कहाँ रहता है?

मुमुक्षुः- वहीं रहता है।

उत्तरः- पुद्गल के क्षेत्र में रहता है। हमारे क्षेत्र में नहीं रहता। चेतन के क्षेत्र में जड़ का, आहाहा! अत्यंताभाव है।

मुमुक्षुः- बराबर! ज्ञेय है ना, भावेन्द्रिय।

उत्तरः- ज्ञेय है। ज्ञान कहाँ है (वो)?

मुमुक्षुः- ज्ञान नहीं है। इंद्रिय है।

उत्तरः- आहाहा! परज्ञेय है। सब पुद्गल के क्षेत्र में डाल दो, उसमें समा जायेगा। उसमें समा जायेगा। भावेन्द्रिय, द्रव्येन्द्रिय, द्रव्यकर्म, सब उसमें, पुद्गल में समा जायेगा। पुद्गल का पेट बड़ा है। और इधर आत्मा का पेट बड़ा है। उसमें कितना समाता है? अनंत गुण समाता है, अनंत गुण की निर्विकारी पर्यायें भी अंदर समाती हैं। ऐसा पेट बड़ा है आत्मा का। आहाहा!

मुमुक्षुः- आत्मा अपने क्षेत्र में बड़ा है, पुद्गल अपने क्षेत्र में बड़ा है।

उत्तरः- हाँ! बँटवारा है। ये बँटवारा (है)। स्व और पर के भेदज्ञान की कला चलती है। आहाहा!

मुमुक्षुः- स्वरुप से जुदाई।

उत्तरः- स्वरुप से जुदाई। **उनमें एक सत्ताकी अनुपपत्ति है**। आहाहा! राग और ज्ञान (की) सत्ता अलग-अलग है, एक सत्ता नहीं है। सत्ता दो क्यों हैं, भिन्न-भिन्न? कि प्रदेश-भेद है। वो न्याय दिया। प्रदेश भिन्न (होने) से सत्ता न्यारी है। इसकी सत्ता और इसकी सत्ता (न्यारी है) क्योंकि क्षेत्र भिन्न है।

मुमुक्षुः- बराबर!

उत्तरः- इतनी जुदाई है?

मुमुक्षुः- इतनी ही जुदाई है।

उत्तरः- पुण्य-तत्त्व और आत्मतत्त्व में इतनी जुदाई है। आहाहा! पुण्य-तत्त्व जड़-तत्त्व है, चेतन है नहीं। चेतन की भ्रान्ति हो गयी। आहाहा! उसमें ज्ञान है ही नहीं। पुण्य के परिणाम में ज्ञान है ही नहीं। ज्ञान नहीं है, तो आत्मा कहाँ से हो? ज्ञान नहीं है उसमें। पर्याय ज्ञान की, ज्ञप्ति नहीं है, तो आत्मा कहाँ से आवे? आहाहा! **उनमें एक सत्ताकी अनुपपत्ति है।** दो सत्ता भिन्न-भिन्न हैं। एक होने की भ्रान्ति हो गई, वो तो अज्ञान है, संसार है। ये दो (अँगुली) भिन्न-भिन्न हैं, हों। (मगर) एक लगती हैं।

दो भाई साथ में चलते हैं। अच्छा! दो एक हो जाते हैं? आहाहा! साथ-साथ में दो भाई चलें, तो भी वो दो रूप हैं। दो, दो रूप हैं, एक रूप होते नहीं हैं। आहाहा! ये दायाँ हाथ और बायाँ हाथ एक नहीं होता है। एक होता है? दायाँ हाथ दायाँ हाथ है, बायाँ हाथ (बायाँ हाथ है)। आहाहा! एक होता नहीं है। एक हो तो लूला हो जाये। एक ही हाथ हो जाये, दो हाथ बने नहीं। लूला समझे ना? मगर दो

मिलकर एक कभी होता (नहीं)। ज्ञान और राग अनादि-अनंत जुदा ही हैं और जुदा ही रहते हैं और जुदा पड़कर नाश हो जाते हैं। आहाहा!

मुमुक्षुः- ... ने पट्टी काटी थी ना, ज्ञान भिन्न और राग भिन्न।

उत्तरः- ज्ञान भिन्न और राग भिन्न। पट्टी काटा था ना वहाँ। आहाहा!

**और इसप्रकार जब कि एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं है,** आहाहा! एक वस्तु की दूसरी वस्तु, पूरी वस्तु जुदी। एक पर्याय से दूसरी पर्याय जुदी ऐसा नहीं है, वस्तु जुदी। अच्छा! दया का परिणाम? जुदा है। होता है तो आत्मा में?

मुमुक्षुः- नहीं।

उत्तरः- नहीं। तो आत्मा में क्या होता है?

मुमुक्षुः- ज्ञान (होता है)।

उत्तरः- ज्ञान होता है। हाँ! वो ज्ञान दया का है कि आत्मा का?

मुमुक्षुः- आत्मा का।

उत्तरः- हाँ! ऐसा लेना। बस! **उनमें एक सत्ताकी अनुपपत्ति है; और इसप्रकार जब कि एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं है तब एकके साथ दूसरीको आधारआधेयसम्बन्ध भी है ही नहीं।** आहाहा! कितना न्यायपूर्ण दिया है, आधार-आधेय सम्बन्ध नहीं है। ये हाथ के आधार से चश्मे का डब्बा रहता नहीं है क्योंकि एक वस्तु दूसरी वस्तु की नहीं है और प्रदेश-भेद है। आधार-आधेय संबंध नहीं है। आधार-आधेय संबंध नहीं है, तो कर्ता-कर्म संबंध भी नहीं है। आहाहा!

राग आत्मा के आधार से नहीं है, वस्तु जुदी है। आधार-आधेय नहीं है। इसलिए कर्ता-कर्म संबंध भी नहीं है। सचमुच ज्ञाता-ज्ञेय संबंध भी नहीं है, तो कर्ता-कर्म संबंध तो दूर रहा। **आधारआधेयसंबंध भी है ही नहीं।** आत्मा के आधार से दया नहीं होती है। दया के परिणाम का आधार आत्मा नहीं है। तो किसका आधार है? पुद्गल के आधार से होता है। मेरे आधार से नहीं होता है। आहाहा! इतनी भेदज्ञान की कला है। लोग तो शुभभाव से धर्म मानते हैं। शुभ करो, करते-करते धर्म (होगा)। पुण्य करो, तो करते-करते धर्म होगा। आहाहा!

मुमुक्षुः- पुद्गल के आधार से तो होता है। पुण्यभाव पुद्गल के आधार से तो होता है, लेकिन यहाँ तो कहते हैं कि पुद्गल में ही होता है।

उत्तरः- हाँ! पुद्गल में ही होता है और पुद्गलमय ही है। आहाहा! क्षेत्र, (वो) उसके क्षेत्र में है। मेरे क्षेत्र में नहीं है। उसमें क्या? अपने क्षेत्र में... चन्दन का वृक्ष होता है, उसके बाजू में ये सब्जी का झाड़ होता है, काँटावाला, कोई भी झाड़। तो क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। चन्दन का जो है, झाड़, वृक्ष, उससे क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। ऐसे जिसमें चन्दन वृक्ष (रूपी) शीतल ज्ञान प्रगट होता है और आकुलतामय राग, वो भिन्न है। मेरे से भिन्न है, अत्यंत भिन्न है। मेरे में आता नहीं है। प्रवेश नहीं है, अंदर में। क्षेत्र भिन्न है, प्रदेश भिन्न है। क्षेत्र भिन्न है। प्रदेश-भेद से बहुत जुदाई करते हैं, एकदम। भाव-भेद से भेद और लक्षण-भेद से भेद (है)। कोई अभी ऐसा कल्पना करता है, अज्ञानी जीव कल्पना करता है कि भाव-भेद से भेद कहो, मगर प्रदेश-भेद से भेद मत कहो। (ये) एकत्वबुद्धिवाला बोलता है, अज्ञानी बोलता है।

अज्ञानी का स्वर है, वो अज्ञानी की भाषा है। हाँ! बचाव करता है। समझे? वो कहते हैं, अभी चलता है। समझे? (अभी) चलती है बात। मेरे सामने तो बहुत आता है। भाव-भेद से भेद कहो, लक्षण-भेद से भेद कहो, तो क्षेत्र तो एक है। (मैंने कहा) बिल्कुल क्षेत्र एक नहीं हैं।

मुमुक्षु:- डॉक्टर कहते हैं कि इसमें तो लिखी हैं जुदाई।

उत्तर:- इसमें तो लिखा है, लेकिन ये मानना चाहिए ना। मानना चाहिए ना। इसमें लिखा है कि पुण्य से धर्म नहीं होता है। सब मानते हैं? कोई-कोई मानते हैं। कोई-कोई मान जाता है, बाकी सब मानते नहीं हैं। जिसकी होनहार अच्छी (है), मोक्ष होने के काल नज़दीक आ गया, वो मान लेता है। पुण्य से धर्म नहीं होता है, ज्ञान से धर्म होता है। आत्मज्ञान से धर्म होता है, शास्त्रज्ञान से नहीं।

मुमुक्षु:- आत्मज्ञान से ही धर्म होता है?

उत्तर:- आत्मज्ञान से ही। आत्मा के अनुभव से (होता है)। ज्ञान यानि अनुभव। जिस ज्ञान में आनंद का स्वाद आवे, उसका नाम ज्ञान है। आहाहा! ज्ञान का लक्षण जानना तो है, मगर अनुभूति लक्षण आनंद है उसका। आहाहा! अतींद्रिय आनंद आता है ज्ञान के अंदर। उसका नाम ज्ञान है। बाकि अज्ञान है, कोरा अज्ञान।

**एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं होने से आधारआधेयसंबंध नहीं है।** आहाहा! आत्मा के आधार.... अद्धर से होता है राग? आत्मा के आधार के बिना? भीत (दीवार) में होना चाहिए? अरे! दीवार जैसा भिन्न है। भले दीवार तो नोकर्म (है), उसमें राग नहीं है। मगर इधर राग उत्पन्न होता है, तो जैसे दीवार भिन्न है, ऐसे राग भिन्न है। ज्ञान से आत्मा अभिन्न है और राग से भिन्न है। आहाहा! **इसलिये (प्रत्येक वस्तुका) अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठारूप (दृढ़तापूर्वक रहनेरूप) ही आधारआधेयसम्बन्ध है।** आहाहा! अपनी वस्तु अपने स्वरुप में रहती है। जो आत्मा है, वो अपने ज्ञान स्वरुप में प्रतिष्ठित रहती है। मगर आत्मा राग में जाता नहीं है और राग इधर आता नहीं है। आहाहा! अलग-अलग वस्तु है। साथ-साथ में रहने पर जुदाई रहती है। साथ-साथ में... संयोग और स्वभाव साथ में रहते हैं। देह और आत्मा साथ-साथ में रहते हैं, संयोग। मगर उसके अंदर जुदाई है कि एक हो गया?

मुमुक्षु:- जुदाई है।

उत्तर:- ऐसे राग का संयोग और ज्ञान का स्वभाव, साथ-साथ में रहने पर राग भिन्न है और ज्ञान भिन्न है। राग में ज्ञान आता नहीं है और ज्ञान में राग आता नहीं है। एक वस्तु से दूसरी वस्तु बिल्कुल भिन्न है। इसलिए ज्ञान, चमत्कारी पदार्थ है।

भाग्यशाली डॉक्टर साहब! भाग्यशाली है। दो वर्ष पहले मुझसे बात की थी, क्या? संध्या ने (कहा) कि, दो वर्ष से उनका पलटा हुआ। दो-तीन वर्ष। समझे? आहाहा! भाग्यशाली, आहाहा! लोटरी लग गयी समझो। ऐसी चीज़ है। आहाहा! बैठती नहीं है प्रदेश-भेद (की बात), ४५ वर्ष के अभ्यासी को (भी)। इसमें लिखा है तो, उसके आधार से तो हाँ बोलना चाहिए कि नहीं? देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा है कि नहीं तुझे? देख! समयसार पढ़ ले। आहाहा! तेरे को नहीं बैठे तो अलग बात, पर इसमें लिखा है तो हाँ तो बोल। (तो कहे) कि नहीं! प्रदेश-भेद नहीं है। यानि उसका (शास्त्र का) नकार करता है। उसका नकार करता है, शास्त्र का। आहाहा! शास्त्र का नकार नहीं करता है, आत्मा का नकार करता है।

आत्मा का (नकार)। आहाहा! शास्त्र तो शास्त्र है। आहाहा! यानि व्यवहार श्रद्धा से भ्रष्ट है। निश्चय श्रद्धा तो भ्रष्ट है ही मगर व्यवहार श्रद्धा से (भी) भ्रष्ट है। शास्त्र में लिखा हो, (तो) अपने को नरम बन जाना चाहिए। ये जिनवाणी है, वो सत्य है। मैं विचार करूँगा, बिठाऊँगा। (तब) तो क्षम्य है। समझे? मगर ये है, झूठा है, ऐसा नहीं बोलना चाहिये। आहाहा!

**इसलिये (प्रत्येक वस्तुका) अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठारूप (दृढ़तापूर्वक रहनेरूप) ही आधारआधेयसम्बन्ध है। इसलिए ज्ञान जो कि**, ज्ञान यानि आत्मा, **ज्ञान जो कि,** आत्मा जो कि, शुद्धात्मा जो कि, ज्ञायकभाव जो कि, ज्ञायकभाव **जो कि जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है**, आहाहा! ये ज्ञायकभाव कहाँ रहता है? कि जानन-क्रिया में रहता है। आहाहा! विराजमान है, वो प्रतिष्ठित है। अपने ज्ञान में ज्ञायक रहता है। ज्ञान से बाहर ज्ञायक जाता नहीं है। क्यों? कि ज्ञान में ज्ञायक रहता है इसका अर्थ क्या? कि ज्ञान में ही ज्ञायक जानने में आता है, तो ज्ञायक ज्ञान में रहता है। (ज्ञायक) राग में जानने में आता नहीं है, तो राग में रहता नहीं है।

मुमुक्षु:- बहुत अच्छा! बहुत न्याय है। बहुत अच्छा! आहाहा!

उत्तर:- जानन-क्रिया में आत्मा है क्योंकि जानन-क्रिया में जाननहार जानने में आता है। जानन-क्रिया में जाननहार ज्ञायकभाव जानने में आता है। तो जिस भाव में ज्ञायकभाव जानने में आता है, उस भाव में ही ज्ञायकभाव है। जिस भाव में, राग में, आत्मा जानने में आता नहीं है, तो उस भाव में ज्ञायकभाव है नहीं।

मुमुक्षु:- अफ़र, अफ़र न्याय साहब!

मुमुक्षु:- उत्तम, उत्तम प्रवचन होता है। आहाहा!

मुमुक्षु:- जानन-क्रिया के आधार से आवे।

उत्तर:- हाँ! जानन-क्रिया में ही आत्मा विराजमान है।

शक्कर की मिठास में शक्कर है। वो बर्तन में शक्कर नहीं है और शक्कर के मैल में भी शक्कर नहीं है। मैल, मैल में है और शक्कर में शक्कर है। और शक्कर का भेद करो तो शक्कर कहाँ है? कि मिठास में है, वो भेद का कथन है। अभेद में तो शक्कर में शक्कर है मगर भेद करके समझाते हैं। तो वो शक्कर नाम का जो द्रव्य पदार्थ है, वो कहाँ है? कि शक्कर की मिठास अवस्था (में है)। ये पर्याय में शक्कर द्रव्य रहता है मगर मैल में रहता नहीं है। बाकी तो शक्कर, शक्कर में है। शक्कर, शक्कर की मिठास पर्याय में है, वो भी भेद का कथन हो गया। वो अभेद कहेंगे। अभेद बाद में....

मुमुक्षु:- बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! आहाहा!

मुमुक्षु:- मार्मिक है।

उत्तर:- मार्मिक है। **ज्ञान जो कि**, ज्ञान यानि आत्मा, शुद्धात्मा, ज्ञायकभाव जो कि, **जो कि जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है, वह,** भगवान आत्मा तो आत्मा के ज्ञान में रहता है। भगवान आत्मा शास्त्रज्ञान में रहता नहीं है। भगवान आत्मा पूजा के विकल्प में रहता नहीं है, यात्रा के विकल्प में रहता नहीं है। उपवास के शुभभाव में भगवान आत्मा विराजमान है नहीं। इसलिए वो धर्म का धर्मी भी नहीं है और धर्म भी नहीं है। वो तो प्रदेश-भेद है, भैया! आहाहा!

सामायिक का राग आया, तो राग में आत्मा है? (नहीं।) आहाहा! राग में आत्मा आता नहीं है (क्यों) कि प्रदेश-भेद है। सामायिक का राग और आत्मा अलग वस्तु है। इसलिए सामायिक के राग का करनेवाला आत्मा नहीं है, उसको जाननेवाला भी नहीं है। जाननेवाले को जानता है, बस। आहाहा!

मुमुक्षुः- जिसमें आत्मा रहता है, वो धर्म है।

उत्तरः- हाँ! जिसमें आत्मा रहता है, वो धर्म है। मगर जो आत्मा रहता है, वो धर्मी है। धर्मी, धर्म में रहता है। धर्मी कर्म में रहता नहीं है। धर्मी धर्म में रहता है, कर्म में रहता नहीं है। दया-दान में भगवान आत्मा रहता नहीं है क्योंकि वो कर्म है। आहाहा! धर्म नहीं है, आत्मा का धर्म (नहीं है)। धर्मी धर्म में रहता है, वो भी भेद का कथन समझाया जाता है। समझाने के लिए भेद है। बाकी तो धर्मी धर्मी में रहता है। बाद में बस, मौन हो जाओ। बस, आखिर की वह बात है।

मुमुक्षुः- आज पराकाष्ठा की बात चलती है। इस तरफ अभेद की पराकाष्ठा और उस तरफ भेद की पराकाष्ठा।

उत्तरः- भेद की पराकाष्ठा। **इसलिए ज्ञान जो कि, ज्ञान जो कि जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है**, रहता है, **वह, जाननक्रियाका,** अभी अभेद करते हैं। वो जो जानन-क्रिया हुई, आत्मा की जानन-क्रिया, वो **ज्ञानसे** यानि आत्मा से **अभिन्नत्व होनेसे, ज्ञानमें ही है**; ज्ञान ज्ञान में है। पहले ज्ञान जानन-क्रिया में, ज्ञान यानि आत्मा जानन-क्रिया में कहा। अभी अभेद होने से ज्ञान, ज्ञान में है। आत्मा, आत्मा में है। आत्मा जानन-क्रिया में भी नहीं है। राग में तो नहीं है। क्या कहा? भगवान आत्मा राग की क्रिया में तो नहीं है, मगर भेद को समझाने के लिए राग में नहीं है, राग की क्रिया में नहीं है, कर्म में ज्ञायक नहीं है। तो धर्म में, जानन-क्रिया जो धर्म है, पर्याय है, उसमें द्रव्य है। बाद में तो, आहाहा! उसमें भी नहीं है। वो तो आत्मा, आत्मा में है। आत्मा, आत्मा में है। आहाहा! तो वहाँ अनुभव होता है। वहाँ अनुभव होता है। (उधर) वहाँ अनुमान होता है कि राग में नहीं है, जानन-क्रिया में आत्मा है। वहाँ अनुमान है, अनुभव नहीं है। और बाद में अभेद करके लिखा कि ज्ञान, ज्ञान में है। पहले ज्ञान ज्ञप्ति-क्रिया में था, अभी आगे बढ़ो। आगे बढ़ो कि मैं इसमें हूँ? (कि) नहीं। मैं तो मेरे में हूँ। ज्ञान की पर्याय अभेद हो जाती है। ज्ञान की पर्याय अभेद होकर अनुभव होता है।

मुमुक्षुः- आहाहा! मुख-चंद्र तें अमृत झरे। अमृत झरता है। आहाहा!

उत्तरः- अभेद में भेद दिखाई नहीं देता है। राग में नहीं है, ये समझाने के लिए ज्ञान उपयोग में उपयोग है, जानन-क्रिया में भगवान आत्मा है, ऐसा समझाया। मगर वो तो अनित्य है। अनित्य में नित्य (रहता है, ऐसा) कहना, वो व्यवहार हो गया। नित्य, नित्य में है। आहाहा! तो अनित्य भी नित्य जैसा हो गया। (अनित्य भी) नित्य जैसा हो गया। नित्य हो गया नहीं, नित्य जैसा हो गया। हाँ! एक-एक शब्द की कीमत है। हो गया टाइम। आहाहा!

मुमुक्षुः- कल वो दलपतपुरवाले पंडित जी आये थे, वो ये कहते थे कि ४० साल से मेरा अभ्यास चालू है। मेरे को ये अटक लगी हुई थी, जो भाई जी से आज मैंने प्रश्न किया है, वो मेरा सहज समाधान हो गया।

उत्तरः- हो गया समाधान।

मुमुक्षु:- आज वो अटक छूटी है, ४० साल के बाद। आपका तो साथ नहीं छोड़ना चाहिए साहब!

उत्तर:- मेरा साथ छोड़कर, आप अपने साथ रहो। वो मुख्य है।

मुमुक्षु:- वो आपका साथ है।